वेदान्त आश्रम की मासिक ई - पत्रिका

वेदान्त पीयूष

वर्ष २३ जनवरी - २०२३ प्रकाशन - ०१

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

वेदान्त पीयूष

जनवरी 2023

प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९५०, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

ॐ

सदाशिवसमारम्भाम्

शंकराचार्यमध्यमाम्

अस्मदाचार्यपर्यन्ताम्

वन्दे गुरु परम्पराम्

विषय सूचि

जनवरी 2023

व्योमवद् व्याप्तदेहाय
दक्षिणामूर्तये नमः॥

देहेन्द्रियमनोबुद्धि
प्रकृतिभ्यो विलक्षणम्।
तद्वृत्तिसाक्षिणं विद्याद्
आत्मानं राजवत्सदा॥

(आत्मबोध श्लोक 18)

आत्मा को सदैव प्रकृतिके कार्य शरीर, इन्द्रियां, मन, बुद्धि से विलक्षण सब के साक्षी एवं राजा की भांति ही जानें।

पूज्य गुरुजी का सन्देश

समय

समय का अर्थ है–जीवन। इसके तीन खंड है –भूत, भविष्य और वर्तमान। समय के ये तीनों रूप अपने आप में कई अर्थ छिपाए हुए हैं। जैसे भूत का अर्थ है–अतीत यानी जो बीत गया। वर्तमान उपलब्ध अवसरों का नाम है, जिनका हम लाभ उठा सकते हैं। भविष्य एक सम्भावना है, जिसे साकार किया जा सकता है।

समय गतिमान भी है। इसलिए कह सकते हैं कि सम्भावनाएं लगातार अवसरों के रूप में उपस्थित होती रहती हैं और अगर उन अवसरों को बीतने दिया जाता है, तो सम्भावनाएं घूमिल हो जाती हैं। ऐसे में अतीत असफलताओं का एक भण्डार होता है। सच तो यह है कि समय इस सृष्टि के गूढ़तम रहस्यों में से एक है। यह हमारी सारी

समय

व्याख्याओं और अन्वेषणों के बावजूद आज भी उतना ही अबूझा और अनजाना है, जितना कि सृष्टि के आरम्भ में था। देव, दानव, पशु, मानव अर्थात् समस्त चर-अचर प्राणी इसके अनुचर हैं। दार्शनिकों ने समय की अनेक व्याख्याएं की हैं। ये सभी समय के स्वरूप को स्पष्ट करती हैं। इन व्याख्याओं में समय के सदुपयोग का आवाहन किया गया है। ये व्याख्याएं कहती है कि अगर समय को व्यर्थ ही बीत जाने दिया गया, तो सफलता भी हाथ से निकल जाती है। इसलिए जीवन में सफलता सुनिश्चित करने के लिए समय को साधना सब से जरुरी है।

समय और जीवन एक दूसरे के पर्यायवाची कहे जा सकते हैं। एक अर्थ में दोनों साथ-साथ उत्पन्न होते है। जीवन का आरम्भ समय का आरम्भ है। जीवन की समाप्ति समय की समाप्ति है। गणित की भाषा में समझे तो जीवन से यदि समय घटा दिया जाय तो शेष बचता है-शून्य। शून्य अर्थात् मृत्यु। हालांकि शब्दों से समय को परिभाषित करने की कोशिश पानी

समय

पर कोई चित्र अंकित करने जैसी है। यानी यह एक असम्भव कार्य है। क्योंकि समय तो अनुभूति का विषय है, और समय को समझने का अर्थ है जीवन को समझना। जो व्यक्ति जीवन के लक्ष्यों को जितना स्पष्ट रूप से पहचानता है, वही समय के मूल्य को आंकने की क्षमता पा सकता है।

समय के किसी क्षण को खो देने का अर्थ है - अवसर को खो देना, अवसरों के रूप में जीवन को खो देना।

समय सतत प्रवाहमान है। नदी में जैसे पानी बहता है, वैसे ही जीवन में समय गुजरता रहता है। समय की गतिशीलता के कारण उसके हर क्षण का सदुपयोग करना और भी जरूरी हो जाता है। एक पश्चिमी विचारक हेराक्लातु ने कहा हैं कि आप एक नदी में दो बार पांव नहीं रख सकते हो क्योंकि वह ठहरी हुई नहीं है। वह लगातार बह रही है, बीत रही है। हमारे जीवन का प्रवाह भी किसी क्षण को दोबारा प्रवाहित नहीं करता। अतः समय के एक किसी पल को खो देने का

समय

अर्थ है अवसर को खो देना और अवसरों के रूप में जीवन को खो देना, खोते रहना। समय का सदुपयोग करने वाले अपने जीवन को धन्य कर लेते हैं, जब कि समय को यूं ही गंवा देने वाले अतीत का पश्चात्ताप करते हुए, दुःख मनाते हुए आने वाले अवसरों को भी खो देते हैं। तात्पर्य यह है कि जीवन निरन्तर सचेत और कर्मशील बने रहने का नाम है। अतीत के पश्चात्ताप भरे विचार और भविष्य की आधारहीन कल्पनाएं वर्तमान के सदुपयोग को भी नष्ट कर देती है।

समय नहीं दिखनेवाली हवा की तरह हमारे चारों ओर लिपटा है और हमारे जीवन के कृत्यों और अनुभूतियों की आधारभूमि है, वह ही हमसे अनदेखा रह जाता है। जिस झरोंखे से जीवन के सत्य की झलक मिल सकती है, हम उसे ही झांकने से चूक जाते हैं। समय सदा अनिश्चित है और अपर्याप्त भी है। अतीत जा चूका है, भविष्य सम्भावनाओं में है, हमारे पास जो है वह वर्तमान है। यही छोटा सा वर्तमान हमारा

समय

जीवन है। वर्तमान में जीना ही समय का सदुपयोग है। सोचिए, अगर यही वर्तमान जीवन का अंतिम क्षण है तो हम क्या करना चाहेगे? ऐसे में हम जो करना चाहेगे, वही समय का वास्तविक मूल्य होगा।

वेदान्त लेख
अहम् ब्रह्मास्मि

शोक-मोह की निवृत्ति

संसार का कारण अज्ञान व तज्जनित मोह है। मोह अर्थात् विपरीत जानना। विपरीत ज्ञान ही अप्रामाणिक कल्पना करना है। उससे किसी भी समस्या का समाधान नहीं हो सकता, क्योंकि विपरीत ज्ञान के उपरान्त किए गए समस्त प्रयास विफल होते है। मोह को महासागर कहा जाता है। क्योंकि अपने गंभीरतापूर्वक किए प्रयास के उपरान्त भी समस्या का कोई अन्त नहीं होता। जब तक गहराई में जाकर खोज नहीं करी तब तक सतही हाथ-पैर मारते रहते है। हर मनुष्य पूर्णतः सुखी-सुरक्षित होना चाहता है और उसके लिए प्रयास करता है। अपने ही अनुभवों से समस्या अन्तहीन दीखाई देती है। जन्मान्तरों से प्रयास कर रहे हैं, तथापि ज्यों के त्यों ही खड़े है।

धर्म का आधार सदैव अध्यात्मज्ञान ही होना चाहिए।

शोक-मोह की निवृत्ति

कहीं ऐसा तो नहीं कि हमारी समस्या कहीं और है और हमारे प्रयास कहीं ओर दिशा में हो रहे है। इस पर विचार करके सूक्ष्मता से देखने पर यह निश्चय हो कि समस्या बाहर नहीं अंदर ही है। ऐसे में बाह्य वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति पर आश्रित होकर उसकी निवृत्ति की चेष्टा ही मोह का सूचक है। इस गलत फहमी की वजह से ही शोक व संताप जलाता रहता है।

जब जब जीवन में समस्या हो तो दृढ़ता से निश्चय करें कि अपने अंदर कुछ न कुछ मोह है। यह निश्चय की वजह से अपने सामर्थ्यो को समग्रता से उचित दिशा में केन्द्रित कर पाते है तथा आत्म-अवलोकन के लिए प्रेरित होते है। अपने जूठे़ प्रयास और उसके अभिमान से मुक्त होकर कर्तव्यताबुद्धि से रहित होते जाते है। जैसे जैसे गहराई में विचार करते जाते हैं तो यह और भी स्पष्टत: दीखता जाता है कि समस्या बाहर नहीं, किन्तु दृष्टि में ही दोष अर्थात् अपने अन्दर मोह विद्यमान

शोक-मोह की निवृत्ति

है। मोह की वजह से ही समस्त शोक होता है – इस तथ्य को आत्मसात् करके देखें। इस दृष्टि से नहीं देखने पर ही यह मोह का सागर के समान अन्तहीन प्रतीत होता है। यह अन्तर्मुखता ही पुण्य उदित होने का लक्षण है।

यद्यपि मोह एक व्यापक व सामान्य शब्द है, किन्तु वेदान्त में मूलभूत मोह के वारे में विचार करके दीखाया जाता है कि मोह दो धरातल पर होता है। एक दृष्टा के बारे में तथा दूसरा दृश्य; जीव और जगत के बारे में। दृष्टा के बारे में मोह का स्वरूप कि हम सीमित, अपूर्ण है, तथा जो व्यक्त अस्मिता है वह ही हमारा सत्य है। प्राणादि उपाधि से तादात्म्य करके उसीसे अपनी अस्मिता प्राप्त करते है। इस प्रकार अनात्मा को सत्य मानकर व्यक्तितत्व का निर्माण होता है। इस क्षूद्र अस्मिता के उपरान्त बाह्य सुखादि की प्राप्ति के प्रयास होते है। सुख-दुःख, सुरक्षा आदि सब कुछ अपने से पृथक्, किसी अन्य पर निर्भर है। अपने प्राणादि उपाधि से तादात्म्य के उपरांत उन पर हमारा सब कुछ निर्भर हो जाता है। इस प्रकार अपने आपको व्यक्ति तथा

शोक-मोह की निवृत्ति

बाहर की दुनिया को सत्य, अपनी पूर्णता का निमित्त समजना रूप दृष्टा और दृश्यविषयक मोह है। इस प्रकार अपने बारे में मोह अन्य मोह को जन्म देता है और हम चक्रव्यूह में फंस जाते है।

वेदान्त इसी मूलभूत समस्या का समाधान बताता है। जिसे अपने अन्दर समस्त समस्या का भान हो गया है और अपनी समस्या के समाधान के लिए समस्त प्रयास कर चूके है, उनका अब यह निश्चय कि हमारे इन प्रयासों से कोई समाधान नहीं। यह विश्वास ही ज्ञान के लिए प्रेरणा देता है। उससे प्रेरित, विरक्ति से युक्त, अन्तर्मुख होकर चिन्तन करते है।

जब तक बाह्य परिस्थिति मन को क्षुब्ध करती है, तब तक विवेक सम्भव नहीं होता। वह ही निश्चय सत्य होता है, जिससे बाह्य परिस्थिति में समत्व बना रहे। संन्यास इसी विवेक का सूचक है। सब का ऐसे परित्याग हुआ कि मानों उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। अतः बाह्य कर्तव्यताबुद्धि से मुक्त है। ऐसी शांति जो जीवन की समस्त परिस्थितियों में

शोक-मोह की निवृत्ति

शान्त बनाए रखती है। सदैव अपने अन्दर शान्त, प्रसन्न, संतुष्ट है। जो अंतर्मुख होकर ऐसे ज्ञानवान की खोज करनी चाहिए। ऐसे ज्ञानवान की सन्निधि में रहना धन्यता का विषय है। वे अपने कृपा कटाक्ष से हमारे मोह के सागर को सूखा देने में समर्थ है। उनकी कृपाकी अभिव्यक्ति वेदान्त के प्रामाणिक ज्ञान के रहस्य को शिष्य/जिज्ञासु के धरातल पर आकर देना है। ऐसे में शिष्य का कर्तव्य मात्र अपने अज्ञान की स्वीकृति के साथ, शरणागत होते हुए ज्ञान के लिए उपलब्ध होना है। वेदान्त के श्रवण आदि के द्वारा अज्ञान, संशयादि की निवृत्ति होकर समस्त मोहरूप सागर मानों सूख सा जाता है।

लघु वाक्यवृत्ति

श्रुतिस्मृतिपुराणानां आलयं करुणालयम्।
नमामि भगवत्पादं शंकरं लोकशंकरम्।।

सविकल्पकजीवोऽयं
ब्रह्म स्यान्निर्विकल्पकम् ।
अहं ब्रह्मेति वाक्येन
सोऽयमर्थोऽभिधीयते ।।

जो जीव इस समय सोपाधिक रूप की तरह दिख रहा है, वह ही वस्तुतः निरूपाधिक ब्रह्म है, यह ही रहस्य 'अहं ब्रह्मास्मि' महावाक्य के द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

लघु वाक्यवृत्ति

पूर्व श्लोक में आचार्य ने बताया कि ब्रह्मानुभव के इच्छुक लोगों को बहुत सावधानीपूर्वक पहले एक, दो, तीन क्षणों तक अर्थात् क्रमशः अवधि को बढाते हुए बुद्धिवृत्तियों के निरोध का अभ्यास करना चाहिए। वृत्तियों के निरोध के अभ्यास के माध्यम से वृत्तियों के मध्य में चेतन तत्त्व देखते हैं, इस तरह बहिर्मुख से अन्तर्मुख होते है।

जब हम विषय को देखते है, तब दृश्यादि विषय के सापेक्ष में दृष्टा, श्रोतादि रूप कर्ता-भोक्ता होते हैं। आचार्य बताते हैं कि **सविकल्पक जीवोऽयं** - दृश्यादि की वृत्ति से हम दृष्टा आदि रूप उपाधि से युक्त अर्थात् सोपाधिक जीव होते है।

वृत्तियों के मध्य में चेतन तत्त्व को देखने के अभ्यास से बहिर्मुखता समाप्त होकर अन्तर्मुखता होने लगती हैं।

लघु वाक्यवृत्ति

हम विषय को देखने के ही अभ्यस्त होते है। विषय व अभिव्यक्ति के अभाव में भी कुछ होता है, उसकी कल्पना नहीं होती है। अतः अभिव्यक्ति के अभाव में भी कुछ है – यह देखना चाहिए। यहां विषय नहीं होने से हम विषयी भी नहीं है। कोई भी अनुभव नहीं होने से दृष्टा, दर्शन व दृश्य नहीं है। अपनी उस सम्भावना को देखना कि दृश्यादि के अभाव में दृष्टादि नहीं है। दृष्टादि तत्–तत् विषय की वजह से हमारी सापेक्ष अस्मिता है। वृत्ति के अभाव में और उसके साथ भी हमारा यह विवेक हो कि उस समय निरुपाधिक बने रहें।

दो वृत्ति के मध्य में खड़े रहने से जिस चेतना का ज्ञान – वह व्यक्त नहीं अव्यक्त को देखना है। वह निरुपाधिक चेतना है; अर्थात् वृत्ति व्यक्त होने पर हम सोपाधिक जीवरूप से विद्यमान है। **ब्रह्मस्यात् निर्विकल्पकम्** – दो वृत्ति के मध्य में उसके अभाव के समय यद्यपि कुछ नहीं दीखता किन्तु वहां एक अव्यक्त, निरुपाधिक, सच्चित् स्वरूप जीवन्तसत्ता विराजमान है। यह निरुपाधिक सत्ता

ही ब्रह्म, वही हम हैं। उसे रियलाइज करना चाहिए। एवं वृत्ति के मध्य में चेतना देखकर विवेक करने पर उपाधि का निषेध होता है, तब जो भी अवशिष्ट है वह निरूपाधिक ब्रह्म हम ही है। वही वृत्ति के समय सोपाधिक जीव की तरह व्यक्त का प्रतीत होता है – यह निश्चय करना चाहिए।

अहं ब्रह्मेति वाक्येन सोऽयमर्थोऽधीयते – महावाक्य के द्वारा जिस अखण्डता का बोध कराया जाता है; वहां संकुचित, सोपाधिक जीव की सापेक्ष अस्मिता का निषेध होने पर जो चेतना विराजमान है, वही निर्विशेष चेतनस्वरूप ब्रह्म मैं हूं। इसी अर्थ को प्रतिपादित किया गया है।

गीता ध्यानश्लोक - ०१

ओम् पार्थाय प्रतिबोधितां भगवता
नारायणेन स्वयं।
व्यासेन ग्रथिता पुराणमुनिना
मध्ये महाभारतम्।
अद्वैतामृतवर्षिणी भगवतीम्
अष्टादशाध्यायिनीं
अम्ब त्वामनुसन्दधामि भगवद्
गीते भवद्वेषिणीम् ॥

हे भगवद्गीता माता! हम तुम्हारा अनु-संधान करते हैं, जिसे भगवान नारायण ने स्वयं पार्थ को उपदेश किया, तथा मुनि वेदव्यासजी ने महाभारत के मध्य में ग्रथित किया, जो अद्वैतरूपी अमृत की वर्षा करने वाली अठारह अध्यायों से युक्त है।

ओम् पार्थाय....

यह गीता का प्रसिद्ध ध्यानश्लोक है। इसमें बहुत सुन्दर तरीके से भगवती गीता की स्तुति की गई है। इस श्लोक से परिचय प्राप्त होता है कि गीता के प्रति कैसी दृष्टि होनी चाहिए!

सनातन धर्म के वांग्मय में वेद को भगवती श्रुति अर्थात् एक वात्सल्यमूर्ति मां की संज्ञा दी गई है। मां सदैव प्रेम, अनुराग और सहजरूप से संवेदना की मूर्ति होती है। जब भी सन्तान किसी कष्ट में होती है, तो उनके प्रति सदैव संवेदना से युक्त, उनका निःस्वार्थतः हित चाहनेवाली होती है। गीता वही बताती है, जो वेद बताते हैं। अतः गीता को भी यहां आचार्य ने भगवती गीता और अम्बा अर्थात् मां के रूप में बताते हुए कहा कि, '**हे अम्ब त्वामनुसन्दधामि**।' हे मां! हम तुम्हारी कृपाप्राप्ति हेतु अनुसन्धान करते हैं।

ओम् पार्थाय....

ओम् पार्थाय प्रतिबोधितां पार्थ अर्थात् पृथापुत्र अर्जुन को, उनके हित के लिए गीता का उपदेश दिया गया। जैसे सन्तान को कष्ट में देखकर मां का हृदय द्रवित हो जाता है। वैसे ही भगवान का स्वयं वात्सल्यमय गीता के रूप में प्राकट्य हुआ। **भगवता नारायणेन स्वयं** – स्वयं भगवान नारायण ने अर्थात् भगवान् कृष्ण के रूप में स्वयं नारायण ही अवतरित हुए हैं। वे यहां एक अर्जुन जैसे शिष्य के लिए गुरु की भूमिका निभा रहे हैं।

व्यासेन ग्रथिता – वेदव्यासजी जो इस पूरी घटना के संवाददाता है। यह भगवान नारायण और अर्जुन के बीच का दिव्य संवाद है, इसलिए संवाददाता भी साधारण नहीं हो सकता। उन **पुराण–मुनिना** – अर्थात् जो पुरातन मुनि हैं, स्वयं वेदों के ज्ञान व दृष्टि से युक्त हैं। पुरातन मुनि होने से समस्त घटना के ज्ञाता हैं। अतः वे समस्त पुराणों के भी रचयिता हैं। उनमें से एक पुराण महाभारत है उसके मध्यभाग में एक सुन्दर सी माला के मध्य में पेण्डण्ट की तरह भगवान और अर्जुन के मध्य के दिव्य संवादरूप श्रीमद्भगवद्गीता सुशोभित है।

ओम् पार्थाय....

अद्वैतामृतवर्षिणीं – इसके विषय को दर्शाते हुए कहते हैं कि यह अद्वैतरूप अमृत की वर्षा रूपा है। अद्वैतरूप अमृत होने से शाश्वत हैं। स्वयं भगवान की दृष्टि होने से यह भगवती गीता भगवान से पृथक् नहीं हैं। और यही अद्वैत का संदेश गीता के माध्यम से भी दिया जाने के कारण अद्वैतरूप अमृत की वर्षारूपा हैं।

अष्टादशाध्यायिनीं – उनका कलेवर 18 अध्यायों वाला है। ऐसी **हे अम्बा! त्वामनुसन्दधामि।** हम आपका अनुसन्धान करते हैं। उससे किस प्रयोजन की सिद्धि होती है यह बताते हुए कहते हैं कि **भवद्वेषिणीम्** – यह अमृतवर्षा भवद्वेषरूपा हैं। अर्थात् इसके अमृतपान करने से भवरूपी रोग की समाप्ति होती है। भव अर्थात् संसार। अपने बारे में क्षूद्र जीव की कल्पना करके जन्मान्तरों तक अन्तहीन संसरण करते रहना ही भवरोग है। किन्तु गीता माता के अमृतरूप वात्सल्य की वर्षा से उसकी समाप्ति हो जाती है।

ऐसी नारायण से अभिन्न अद्वैतरूप अमृत की वर्षा करनेवाली मां गीता का हम अनुसन्धान करते हैं।
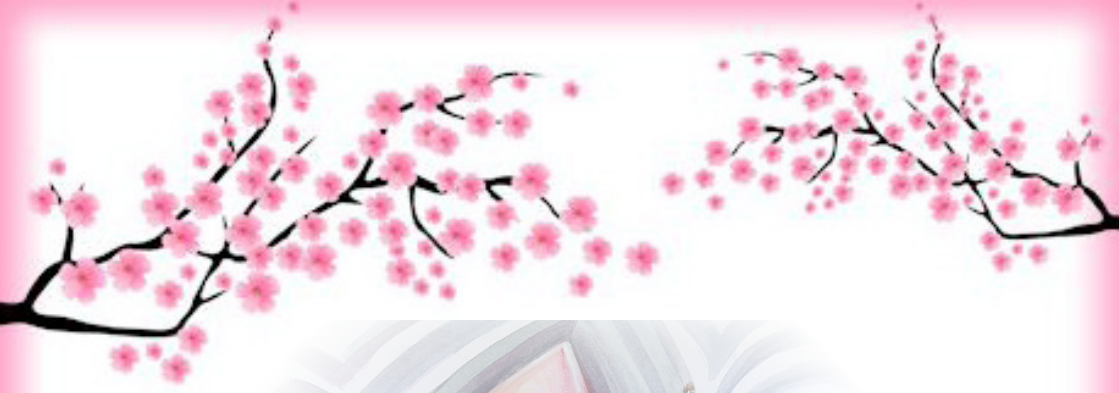
सरस्वती नमस्तुभ्यं
वरदे कामरूपिणी

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)

श्री शत्रुघ्न चरित्र

— ०१ —

रिपुसूदन पद कमल नमामी।
सूर सुसील भरत अनुगामी।।

श्री शत्रुघ्न चरित्र

मानस में शत्रुघ्नजी का परिचय 'भरतानुज' और 'लखन लघुभाई' दोनों ही रूपों में दिया गया है। वस्तुतः उनके व्यक्तित्व में श्री भरत की मौन समर्पण भावना और श्री लक्ष्मण की तेजस्विता दोनों एक साथ साकार होती है। किन्तु उनमें दोनों विरोधी प्रतीत होनेवाले गुणों का समन्वय होने पर भी मुख्यतः वे 'भरतानुगामी' ही हैं। मानस और विनयपत्रिका में गोस्वामीजी ने उनके इसी रूप को प्रधानता दी है।

शत्रुघ्न शत्रुओं के लिए उसी प्रकार घात हैं, जैसे हाथी के लिए सिंह अथवा अन्धकार के लिए प्रकाश। यों प्रथम दृष्टि में यह नाम बड़ा विरोधाभासी सा प्रतीत होता है। लगता है कि इसी नाम की सार्थकता तो श्री लक्ष्मण के व्यक्तित्व में है। ओजस्विता और तेजस्विता के मूर्तरूप लक्ष्मण निश्चित रूप से इस नाम के सर्वश्रेष्ठ अधिकारी थे, किन्तु त्रिकालज्ञ वशिष्ठ ने यह नाम उस

श्री शत्रुघ्न चरित्र

पात्र को दिया जिसकी वीरता का कोई दृष्टान्त कम से कम रामचरित मानस में नहीं प्राप्त होता है। हां, वे मन्थरा पर प्रहार करते हुए अवश्य दिखाई देते हैं। परन्तु कुबरी पर उनके द्वारा किया गया प्रहार इस नाम की कोई सार्थकता सिद्ध नहीं करता है। फिर वशिष्ठजी के द्वारा इस नामकरण का उद्देश्य क्या था?

सम्भवत: गुरु वशिष्ठ इस नाम के माध्यम से उस अभाव की पूर्ति करते हैं जो शत्रुघ्न के घटना रहित जीवन के कारण उन्हें लोक–दृष्टि में उपेक्षा का पात्र बना सकता था। पूरे रामचरित मानस में मन्थरा प्रसंग के अपवाद को छोड़कर वे कहीं भी सामने नहीं आते। पूरे चरित्र में उनका महामौन आश्चर्य की सीमा तक पहुंचा हुआ है। क्या यह उनके चरित्र की नगण्यता का परिचायक है? क्या उनमें स्वयं को अभिव्यक्त करने की कला का अभाव था, अथवा स्वेच्छा से स्वीकृत गोपन था? गुरु वशिष्ठ के द्वारा किया गया नामकरण दूसरे मत का समर्थन करता है। स्वयं के गुणों की सही सन्दर्भ में अभिव्यक्ति बहुत बड़ी कला है, किन्तु सामर्थ्य होते हुए भी अपने आपको छिपा

लेना और दूसरों को आगे कर देना इतनी बड़ी महानता है कि किसी भी गुण से इसकी तुलना नहीं की जा सकती। शत्रुघ्नजी इस महानता के सच्चे अधिकारी हैं। भले ही वे मानस-भवन पर अपनी आभा बिखेरते हुए दृष्टिगोचर न हों पर जो आधारशिला की अगोचरता के गौरव से परिचित हैं उनके लिए शत्रुघ्न के महिमामय त्याग को समझ पाना कठिन नहीं होना चाहिए। अगणित युद्धों का विजेता भी अहं के सामने पराजित हो जाता है, परन्तु शत्रुघ्न उस अहंकार को परास्त करने में समर्थ होते हैं। अतः शत्रुघ्न के नाम की सर्वाधिक सार्थकता 'लक्ष्मणानुज' में ही है। लगता है कि गुरु वशिष्ठ के द्वारा किए जाने वाले नामकरण के पीछे यही रहस्य था।

सत्य तो यह है कि यदि भगवान राम के वनगमन का प्रसंग न आता तो श्री भरत भी लोक-दृष्टि से उतने ही ओझल रहते जितने कि शत्रुघ्न रहे। आत्मगोपन और मूल समर्पण ही भरत का जीवन-दर्शन है। परिस्थितियों की बाध्यता उन्हें सामने आने और मुखर होने के लिए बाध्य करती है। शत्रुघ्न के सामने ऐसी कोई परिस्थिति न थी।

– २१ –

उत्तरकाशी
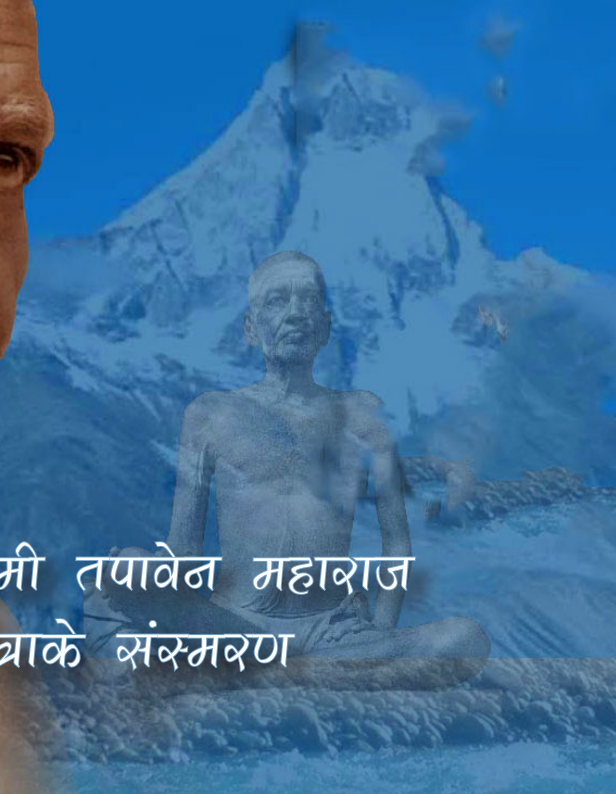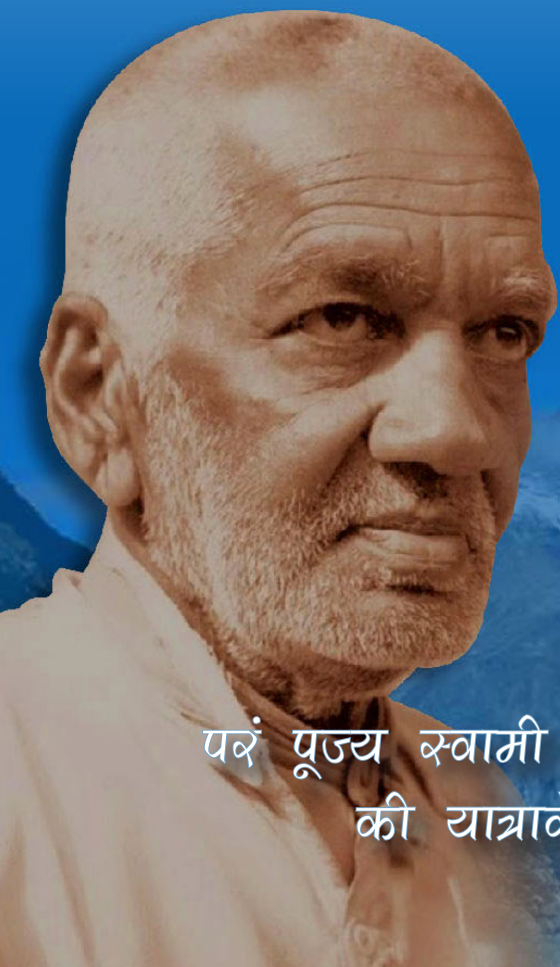
परं पूज्य स्वामी तपोवन महाराज
की यात्राके संस्मरण

जीवन्मुक्त

टहरी से एक विशाल मैदान से होकर रास्ता उपर जाता है। वैशाख का महिना होने से गेहूँ की फसल काटकर श्यामाक आदि अनाज बोये गये है। अधिक वृक्षों के अभाव में चारो ओर उँचाई पर उठी हुई इन नग्न पर्वत राशियों, उनके पार्श्व भागों में इधर उधर पास पास स्थित ग्राम पंक्तियों तथा केदारराजियों का दृश्य इस मैदान के बीच से चलनेवाले एक रसज्ञ के मन को अधिाकाधिक आकृष्ट करता रहता है। लीजिए, इस विशाल मैदान को पार करने पर, अर्थात् टहरी से चार मील पश्चिम की ओर, 'मादगून' नामक गाँव दिखायी देता है। यहाँ स्वामी रामतीर्थ जी कुछ काल तक रहे थे।

जीवन्मुक्त

यहाँ से गंगा के दर्शन करते हुए पर्वत प्रांतों से फिर आगे की ओर बढिए। कई पहाडों और जहाँ तहाँ कई गाँवों को पार करते हुए सत्ताईस मील आगे जाने पर वहाँ 'धरासु' नामक एक स्थान आ जाता है। यहाँ से जम्नोत्री की ओर एक मार्ग तथा उत्तरकाशी से होकर गंगोत्री के लिए दूसरा मार्ग निकलता है। धरासु से पर्वत नितम्बों से होकर भागीरथी के किनारे किनारे नौ मील उपर की ओर यात्रा करने पर 'डूण्डा' नामक एक पवित्र स्थान पर पहुँच जाते हैं। इस प्रदेश के पौराणिक नाम का निर्णय करना अब असंभव हैं, तो भी यह अनुमान किया जा सकता है कि पुरातन काल में यह ऋषियों के विहार से पवित्र एक तपोवन था। क्योंकि यहाँ से दो मील की दूरी पर 'उद्दालक' का आश्रम स्थान दिखायी देता है। उद्दालक श्वेतकेतु के पिता, ब्रह्मविद्या उपदेष्टा तथा छन्दोग्योपनिषद् के एक प्रसिद्ध ऋषिपुंगव थे। उद्दालक महर्षि तथा उनकी शिष्यमंडली के पादपांसुओं से पवित्र इस प्रदेश में पहुँच जाने पर मेरा मन कई उत्कृष्ट भावनाओं में निमग्न हो जाता था। कभी कभी तो मैं भक्ति और आदर से पुलकित शरीर के साथ अत्यधिक कृतार्थ होकर उस

जीवन्मुक्त

आश्रम भूमि की ओर देखते हुए आत्मविस्मृत हो
मार्ग में चिरकाल तक बैठा ही रह जाता था।

इस स्थान को पार कर फिर चार मील आगे की ओर चले जाए तो वहां कुछ दूरी पर गंगा जमुना नदियों के मध्यवर्ती एक पर्वत शिखर पर एक अति सुन्दर आश्रम दिखायी देता है, जहा रेणुका देवी के साथ जमदग्नि महर्षि विराजमान थे। यहा से पुनः एक मील आगे बढें तो वहा गंगातट पर कपिल मुनि का आश्रम नजर आता है। सांख्यशास्त्र कर्ता कपिल भगवान् के स्थान हरिद्व ार तथा गंगासागर में भी दृष्टिगोचर होते है। यों हिमालय शिखरों पर तथा निम्न देशों पर इधर उध ार कई ऋषि पुंगवों के भिन्न-भिन्न स्थान दिखायी पडते है। इसलिए श्रद्धा न रखनेवाले लोगों का यह आक्षेप है कि वे सब केवल श्रद्धालु लोगों की कल्पना मात्र हैं, पर ऐसा कहना ठीक नहीं है। अनेक ऐसे स्थान कल्पित भी हो सकते हैं, किन्तु ऐसा विश्वास करने में भी कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि एक ही ऋषि हिमालय में जहां तहां रमणीय स्थानों पर जब तब तपश्चर्या का अनुष्ठान करते हुए रहा करते थे।

पौराणिक गाथा

अमूल्य ब्रह्मविद्या

अमूल्य ब्रह्मविद्या

छान्दोग्य उपनिषद् में प्रसंग आता है कि प्रसिद्ध जानश्रुति नामक एक राजा था। वह बहुत श्रद्धा के साथ आदरपूर्वक योग्य पात्रों को बहुत दान, दक्षिणा आदि दिया करता था तथा सतत धर्मपरायण रहता था। वह चाहता था कि हर साधू-ब्राह्मण आदि की हम ही सेवा करें, अतः उन्होंने जहाँ-तहाँ सर्वत्र ऐसे अनेकों धर्मस्थान, अन्नक्षेत्र आदि खोल रखे थे।

राजा के अन्नदान से सन्तुष्ट हुए ऋषि और देवताओं ने राजा में ब्रह्मज्ञान की जिज्ञासा को जगाने के लिये हंसों का रूप धारण किया। वे रात को ऐसे समय उड़ते हुए महल की छत के उपर जा पहुँचे कि जिससे राजा को दिखाई दे सके। वहाँ पिछले हंस ने अगले हंस से कहा- 'भाई भल्लाश! इस जानश्रुति का तेज दिन के समान सब जगह फैल रहा है। इसका स्पर्श न कर लेना, अन्यथा यह प्रचण्ड तेज तुझे भस्म कर देगा। यह सुन कर अगले हंस ने कहा- 'तुम बैलगाड़ी वाले रैक्व को नहीं जानते, यह तेज तो उसका है। पीछले हंस

अमूल्य ब्रह्मविद्या

ने कहा, वह गाड़ीवाला रैक्व कौन है और कैसा है?' वह बोला उस रैक्व की महिमा का बखान क्या किया जाय। जैसे जुआ खेलने वाला पासे से सब कुछ जीत लेता है। वैसे ही प्रजा जो कुछ भी शुभ कार्य करती है, वह सारे शुभ कर्म और उनका फल रैक्व को प्राप्त ही है। अर्थात् प्रजा की समस्त शुभ क्रियाओं का फल उसे मिलता है। वह रैक्व जिस जानने योग्य वस्तु को जानता है, उसे जो जान लेता है वह भी उन समस्त सुख को सहज ही प्राप्त कर लेता है।

महल पर सोये हुए राजा जानश्रुति ने हंसों की बात सुनी और रातभर वह इन्हीं बातों का स्मरण करता हुआ जगता रहा। प्रातः उठते ही उन्होंने अपने सिपाहियों से कहा कि तुम गाड़ीवाले रैक्व के पास जाकर उससे कहो कि मैं उनसे मिलना चाहता हूँ। राजा की आज्ञानुसार सिपाहियों ने बहुत से नगरों एवं गावों में खोज की। किन्तु उनका पता नहीं चला।

अन्ततः उन्होंने किसी एकान्त निर्जन प्रदेश में गाड़ी के नीचे बैठे हुए एक पुरुष को देखा और उससे पूछने पर पता चला कि गाड़ीवाला रैक्व वह ही है। सिपाहियों ने राजा को खबर दी और राजा छः सौ गायें, कुछ सोने के आभूषण और खच्चरियों से जोता हुआ रथ लेकर रैक्व के पास गया और हाथ जोड़कर रैक्व से बोला, भगवन्! यह गायें सोना रथ

अमूल्य ब्रह्मविद्या

आदि आप स्वीकार कीजिये और जिस तत्त्व को आप जानते हैं उसका मुझ को उपदेश दीजिए।' राजा की बात सुनकर रैक्व ने कहा, 'अरे शूद्र ! यह सब तू अपने ही पास रख। मुनि के शूद्र कहने पर राजा सोचने लगा कि शायद इतना थोड़ा धन लेकर उसके पास गया था इसलिए शूद्र कहा होगा। यह सोचकर बहुत सारा धन लेकर तथा अपनी पुत्री को लेकर पुनः उसके पास पहुंचा, और बोला कि, 'हे मुनि! यह सब मैं आपके लिये लाया हूँ, तथा मेरी पुत्री को भी आप अपनी धर्मपत्नी के रूप में स्वीकार कीजिये और आप जिस विशेष के बारे में जानते हैं उसके बारे में मुझे भी उपदेश कीजिए।

राजा के वचन सुनकर तथा कन्या की करुणाभरी स्थिति देखकर रैक्व ने कहा, 'हे शूद्र ! तू फिर यही सब चीजें मेरे लिये लाया है। क्या इनसे ब्रह्मज्ञान खरीदा जा सकता है? तू शूद्र इसलिये नहीं है कि मुझे कम दान दे रहा है ! किन्तु इसलिये है कि तू इस दिव्यज्ञान का मूल्य इन तुच्छ चीजों के बराबर समझता है। राजा चुप होकर बैठ गया। रैक्व की जगत के प्रति तुच्छता की तथा अपने अन्दर पूर्णता की दृष्टि देखकर वह अपने सत्कर्मों के पुण्य को भी तुच्छ समझने लगा। उसे अपने सत्कर्मों के कर्तृत्व के अभिमान से रहित और अज्ञान की विनम्रता से युक्त हुआ देखा तब रैक्व ने उसे ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

आश्रम समाचार

पूर्ण कुम्भ से स्वागत

आश्रम समाचार

पूज्य गुरुजी का प्राकट्यदिन

आश्रम समाचार

दीप प्रज्ज्वलन

आश्रम समाचार

जन्म - जीव की अभिव्यक्ति

आश्रम समाचार

न जायते म्रियते वा कदाचिद्

आश्रम समाचार

नायं भूत्वा भविता वा न भूयः

आश्रम समाचार

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था

आश्रम समाचार

न तत्र सूर्यो भाति...

आश्रम समाचार

शिवपूजा एवं अभिषेक

आश्रम समाचार

ओम् नमः शिवाय
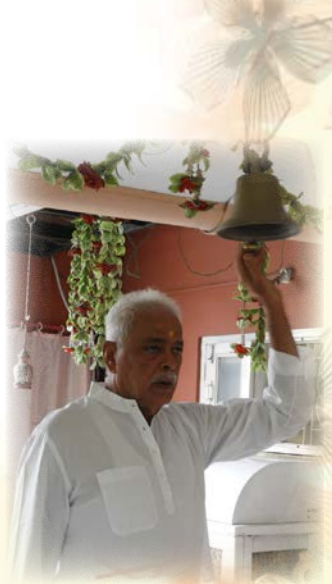
आश्रम समाचार

तस्मै श्री गुरवे नमः

आश्रम समाचार

आश्रम समाचार

आश्रम समाचार

गीता ज्ञानयज्ञ हेतु प्रस्थान

आश्रम समाचार

गीता ज्ञान यज्ञ - गोरेगांव

आश्रम समाचार

गीता अध्याय - १२

आश्रम समाचार

भावि कार्यक्रम हेतु विचारणा

आश्रम समाचार

गोकुल धाम मन्दिर, गोरेगांव

आश्रम समाचार

आश्रम समाचार

गीते भवद्द्वेषिणीम्

आश्रम समाचार

गीता जयन्ति - गीता भवन
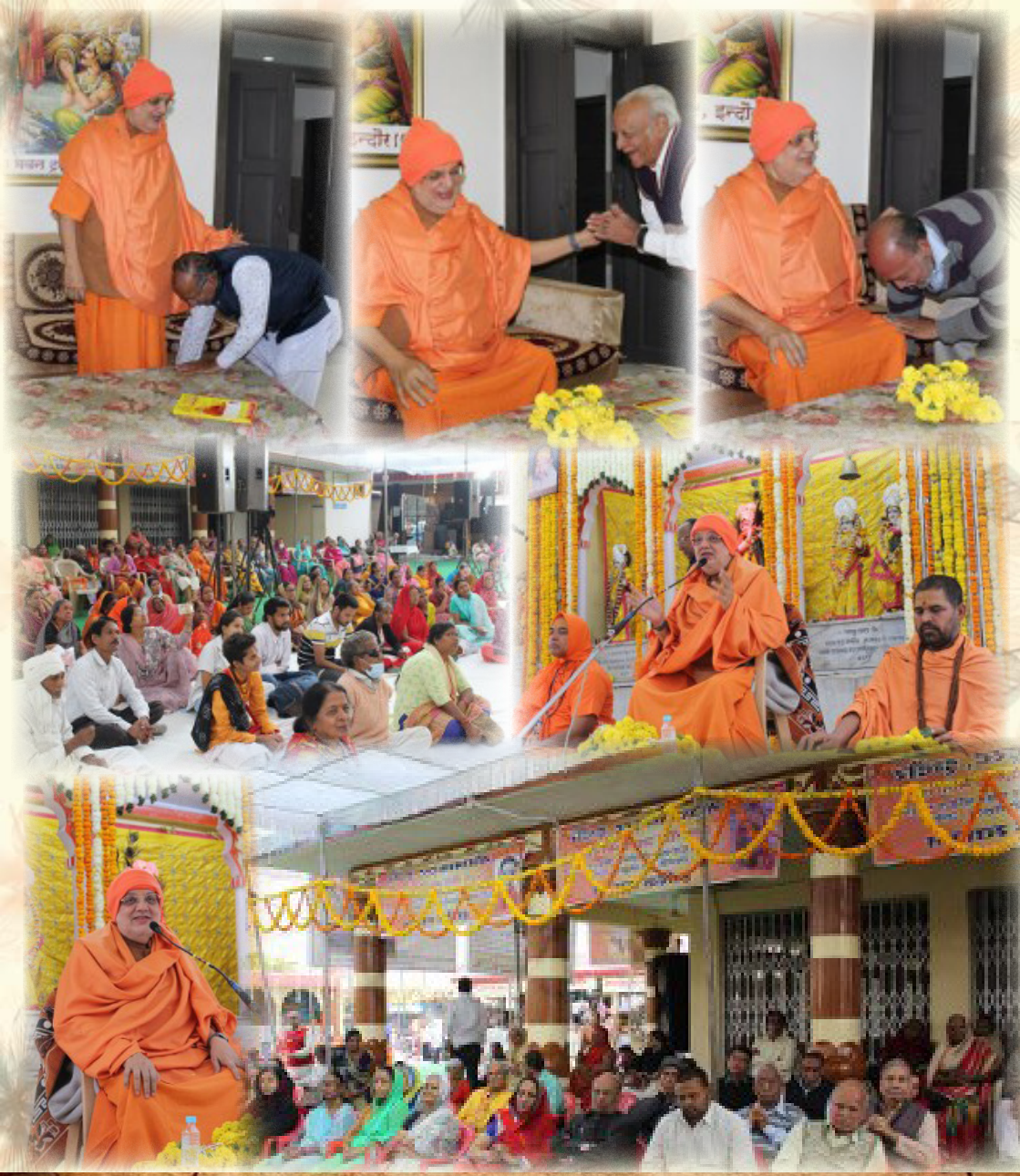
ICF Trust Meeting at Indore

Talks on (by P. Guruji) :

Video Pravachans on YouTube Channel

~ Gita Ch. 12

~ Gita Ch. 17

~ Sadhna Panchakam

~ Drig-Drushya Vivek

~ Upadesh Saar

~ Atma Bodha Pravachan

- Sundar Kand Pravachan

~ Prerak Kahaniya

- Ekshloki Pravachan

~ Sampoorna Gita Pravachan

Internet

- Kathopanishad Pravachan

- Shiva Mahimna Pravachan

- Hanuman Chalisa

~ Laghu Vakya Vrittu (Sw. Amitananda in Guj)

~ Gita Ch. 5 (Sw. Amitananda in Guj)

Online Ongoing Programs

Prerak Kahaniyan

by Swamini Poornanandaji

Shiv Mahimna Stotram & Gita Chanting

by Sw. Samatanandaji

Published Once a week in VDS Group

Internet

Audio Pravachans

~ Sadhna Panchakam

~ Drig Drushya Vivek

~Upadesh Saar

~ Prerak Kahaniya

~ Sampoorna Gita Pravachan

~ Atmabodha Lessons

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Monthly eZines

~ Vedanta Sandesh - Jan '23

~ Vedanta Piyush - Dec '22

आश्रम / मिशन कार्यक्रम

शांकरभाष्य समेत भगवद्गीता की कक्षाएं

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

प्रति दिन प्रातः 8.30 बजे से

पू. गुरुजी के द्वारा

वेदान्त शिविर

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

13 से 17 फरवरी 2023

पू. गुरुजी एवं आश्रम महात्मागण द्वारा

गीता ज्ञान यज्ञ

जलगांव

14 से 20 मार्च 2023

पू. स्वामिनी पूर्णानन्दजी के द्वारा